



समृद्ध भारत

द्वारा प्रकाशित

मासिक समाचार-पत्र

संस्करण-षष्ठ माह-नवंबर
Edition -VI Month- NOVEMBER

बस एक दीप जला देना – उनके नाम

बस एक दीप जला देना जो इस बार दीपावली में भारत की सीमाओं की सुरक्षा कर रहे और वह सुरक्षा इसलिए कर रहे हैं कि हम हर त्यौहार शांति पूर्वक और सामाजिक सौहार्द के वातावरण में मना सकें। हम भयमुक्त होकर अपने घरों में रह सकें अपने परिवार के साथ रह सकें अपनी खुशियां मना सके। इस बार एक दीप अवश्य जलाना है उन परिवारों के लिए जिन परिवारों के बच्चे सीमाओं पर ऋणात्मक तापमान में दिन और रात अपनी आंखें खोले हुए हैं। कम से कम उन जवानों को और उनके परिवार को

यह एहसास तो हो कि सवा सौ करोड़ जनता उनके साथ खड़ी है। इस बार एक दीप जलाना है कोरोना के उन महानायकों के लिए जिन्हें अपने घर परिवार छोड़ कर इस महामारी में मरीजों का उपचार करने में लगे रहे। सफाई कर्मचारियों के लिए एक दीप जलाना है जो इस महामारी में अपनी जान की परवाह किए बिना देश को साफ सुथरा करने में लगे रहे जिससे महामारी न फैल सके। उन पुलिस वालों के लिए भी दीप जलाना है जिन्होंने लॉकडाउन के दौरान अपने

कर्तव्यों का पालन किया है। उन सभी लोगों के लिए हमें दीप जलाना है जिन्होंने लॉकडाउन के दौरान घर लौट रहे भूखे प्यासे मजदूरों को भोजन व जलपान की व्यवस्था की। साथ ही उन सभी लोगों के लिए जो इस महामारी में सूझबूझ का प्रयोग करत रहे हैं तथा सरकार और डॉक्टरों द्वारा दी गई सलाह का पालन करते हुए घरों में कैद रहे या आज भी दिशा निर्देशों का पालन कर रहे हैं।



विशेष- समाचार पत्रिका (समृद्ध भारत) को पढ़ने के लिए सर्वप्रथम वेबसाइट naad anusandhan.org को खोलें उसके बाद प्रकाशन (publication) के विकल्प को चुनें सामने समाचार पत्रिका दिखाई देगी। यदि आप कम्प्यूटर अथवा लैपटॉप पर खोलेंगे तो रोलर को नीचे करने पर समस्त पृष्ठों को एक के बाद एक सामने पायेंगे। यदि आप स्मार्टफोन के द्वारा प्रकाशन के विकल्प तक उपरोक्त क्रम से ही जायेंगे, परन्तु पत्रिका के अन्य पेजों को खोलने के लिए पत्रिका के प्रथम पेज को एक बार टैप करें उसके बाद डाउनलोड करने का विकल्प सामने आयेगा। डाउनलोड को चुनें, उसके बाद स्लाइड करें। एक के बाद एक पेज सामने आते चले जायेंगे।

संपादकीय विभाग

विकसित देशों का कारोबार

विश्व के ज्यादातर विकसित कहे जाने वाले राष्ट्र सर्वशक्तिमान (सुपरपावर) बनने की होड़ में निरंतर विध्वंसक अस्त्र शस्त्रों के निर्माण में लगे रहते हैं। निर्माण के उपरान्त उनका परीक्षण और उसके बाद उन्हें बेचने के लिए विकासशील देशों की तलाश में जुट जाते हैं। कोरोना महामारी के कारण विश्व में छाई आर्थिक मंदी के इस दौर में भी हथियार निर्माण के क्षेत्र में कोई कमी नहीं है। यह कार्यक्रम निरंतर चलता रहता है, यह कहना भी अतिशयोक्ति नहीं होगा कि हथियारों के बेचने का बाजार तैयार करने में अपनी अहम भूमिका निभाते हैं यह विकसित देश। इस्लामिक आतंकवाद कहरवाद कहे जाने वाले कारणां का उदय भी इन विकसित देशों की सहायता से ही पनपता है। सांघियत रूस के विघटन में अहम भूमिका निभाने वाले आतंकवादियों को अमेरिका की सरपरस्ती में पाकिस्तान द्वारा प्रशिक्षित पोषित किया गया था। रूस का तो विघटन हो गया और आतंकवादियों का विस्तार। अमेरिका को शायद इस बात का ज्ञान नहीं था कि आतंकवादियों के निर्माण का परिणाम उसे भी भोगना पड़ेगा। 9/11को हुआ आतंकवादी हमला जिसमें वर्ल्ड ट्रेड सेंटर को तबाह कर दिया गया वह इन्हीं आतंकवादियों का कारनामा था। आतंकवादियों का रक्षाई सरपरस्त पाकिस्तान जो आतंकियों का पोषण करते-करते आर्थिक रूप से पूरी तरह तबाह हो चुका है, परंतु आतंक के रास्ते को छोड़ने के लिए तैयार नहीं है। पाकिस्तान द्वारा परमाणु निर्माण की प्रक्रिया को अन्य देशों को बेचने के साथ पाकिस्तान को भी धीरे-धीरे बेचने की राह पर चल पड़ा है। जहां भी आतंकवादी घटनाएं होती हैं वहां पाकिस्तानी आतंकवादियों का जिज्ञा जरूर आता है। भारत के साथ सीधी लड़ाई में बार-बार हारने के बावजूद पाकिस्तान आतंकवादियों कि घुसपैठ कराने की कोशिश में लगातार लाग रहता है। उसी तथा पुलवामा में हुई आतंकी घटनाएं पाकिस्तान प्रायोजित थीं। जिसे वह सार्वजनिक रूप से स्वीकार कर चुका है।

आतंकवाद और आतंकियों के सहारे वह मुस्लिम देशों में अपनी चौधराहत स्थापित करना चाहता है। इराक, सीरिया, अफगानिस्तान आदि जगहों पर हुई घटनाएं जहां अमेरिका रूस और नाटो आदि विकसित देशों ने अपनी शक्तियों का भरपूर प्रदर्शन किया। मानवता कराहती रही, मासूम मरते रहे, बम और बारूद का दौर चलता रहा, जो आज तक बंद नहीं हुआ है। उधर तुर्की जो नाटो का भी सदस्य और अमेरिका तथा रूस दोनों के सैन्य उपकरणों का उपभोक्ता भी है, जैसे अमेरिका के F-16 युद्धक विमान और रूस की S-400 मिसाइल रक्षा प्रणाली। आर्मीनिया और अजरबैजान के बीच हुए विध्वंसक युद्ध का प्रायोजक तुर्की ही था। सैन्य उपकरण तथा सीरियाई तथा पाकिस्तानी आतंकवादियों को अजरबैजान के पक्ष में युद्ध करने के लिए तुर्की ने भरपूर सहायता की थी। अमेरिका ने पाकिस्तान को चेतावनी भी दी थी, परंतु पाकिस्तान ने युद्ध में अजरबैजान की पूरी तरह से सहायता की थी। आतंक का पर्याय बन चुका है पाकिस्तान। पाकिस्तान की कर्तूतों से अमेरिका अनजान नहीं था, इसके बाद भी पूर्व में आतंकवाद से युद्ध करने के लिए अमेरिका ने पाकिस्तान को F-14 युद्धक विमान दिए थे। जिनमें से एक विमान को भारत के अभिनंदन में झड़प में MIG-29 से मार गिराया था। कहने का तात्पर्य यह है कि हथियारों के निर्माण कर्ता विश्व के ये विकसित देश आतंकवाद और इस्लामिक कहरपंथ के विरुद्ध युद्ध करने का दम तो भरते हैं परंतु यह सभी अपने स्वार्थ की पूर्ति हेतु युद्धक माहौल को समाप्त नहीं होने देते और सुलगाए रहते हैं ताकि इनका कारोबार निरंतर चलता रहे। इसके लिए आवश्यक है कि यूनाइटेड नेशन की तर्ज पर, जैसे तो यूनाइटेड नेशन की विश्वसनीयता पर भी सवालिया निशान लग चुका है, परंतु समय की आवश्यकता है कि एक ऐसे संगठन को विकसित किया जाए जिसमें सभी शांतिप्रिय और विकासशील देश इन विकसित देशों की निंदनीय अर्थ वादी मानसिकता के चंगुल से बच सकें।

संपादक
तरुण सिंह



Made by Laks & Dee

स्वामी, मुद्रक एवं प्रकाशक
नाद अनुसंधान ट्रस्ट(पंजीकृत)
प्रबंधक- संजय कुमार बनर्जी
तकनीकी सहयोग- सभ्यता सिंह
सम्पादकीय विभाग
संपादक-तरुण सिंह
सह-संपादक-अभय प्रताप सिंह- संस्कृति सिंह
विशेष संवाददाता- तनुज कुमार

बिहार चुनाव – कुछ कहता है



बिहार विधानसभा चुनाव के नतीजे आ चुके हैं। एक बार फिर एनडीए को सरकार बनाने का जनादेश मिला है। 243 विधानसभा सीट में बहुमत के लिए 122 सीटों के लक्ष्य को एनडीए ने 125 सीटें जीतकर हासिल कर लिया। वही कांटे की टक्कर देने वाले महा गठबंधन को 110 सीटें हासिल हुईं।

बिहार चुनाव में सारे एग्जिट पोल झूठे साबित हो गए जिसके पीछे अनेक तर्क दिए जा रहे हैं। ओवैसी की पार्टी को 5 सीटें मिलना। यह बताता है कि बिहार में महागठबंधन का YM फैक्टर नहीं काम किया। चिराग पासवान एनडीए से अलग होना भी एनडीए के जीत में सहायक हुआ क्योंकि महादलित मतदाता महागठबंधन की ओर नहीं झुक सका आदि।

लेकिन मेरा मानना है कि इन सब के बावजूद बिहार में एनडीए को पूर्ण बहुमत मिला और वह लगातार सत्ता में काबिज रहे इसके पीछे नीतीश कुमार की साफ-सुथरी छवि जिम्मेदार है, साथ ही मैं प्रधानमंत्री मोदी के ऊपर लोगों का भरोसा अभी भी बना हुआ है। भारतीय जनता पार्टी द्वारा यह कहना कि मोदी है कि मुमकिन है कि नारे को मोदी जी साकार करते नजर आ रहे हैं। इसके अलावा कुछ अन्य

कारण और भी हैं जैसे बिहार के लोकतांत्रिक जीवन के इतिहास में कुछ पूर्ववर्ती सरकारों द्वारा घटित भयानक घटनाओं को आज भी जनता भुला नहीं पा रही है। जब चारों तरफ अराजकता का माहौल रहा लूट हत्या डकैती के मामले होते रहे, अपहरण एक व्यवसाय के रूप में फल फूल रहा था। बिहार में एक प्रकार की राजनीतिक शून्यता आ गई थी। सामान्य जनता उस में पिसती रही जिसका दर्द आज भी लोग महसूस करते हैं। एनडीए सरकार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने इन सब चीजों को काफी नियंत्रित किया और एक सुशासन बाबू की भूमिका में नजर आये। जिससे लोगों का विश्वास एनडीए के ऊपर बढ़ा।

कोरोना का हाल में केंद्र सरकार द्वारा दी गई सहायता या उससे पहले अन्य जनकल्याणकारी योजनाओं का लाभ जनता को मिला जिससे उसका झुकाव एनडीए के तरफ हुआ।

लेकिन यह चुनाव कुछ और भी कह रहा है जहां तक मुझे प्रतीत हो रहा है कि अब चुनाव में झूठे वादों को जनता स्वीकार नहीं करने वाली। बिहार चुनाव यह भी कह रहा है कि भारत में अब जातिवादी राजनीति, झूठ और पाखंड की राजनीति, सांप्रदायिक राजनीति के

दिन काफी कम है अब कोई राजनीतिक दल जातिवादी राजनीति को अधिक बढ़ावा देगा तो उसका राजनीतिक पतन हो जाएगा। जिसका असर बिहार में दिखाई पड़ने लगा। इस परिवर्तन का श्रेय भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी को जाता है साथ ही मैं बिहार में इस श्रेय के हकदार नीतीश कुमार जी हैं। मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं कि अब भारतीय राजनीति में एक नया दौर शुरू हो गया है। और भविष्य के चुनाव इस दौर को आगे बढ़ाएंगे।

अब भारत के सभी राजनीतिक दलों को विकास और राष्ट्रीय हित को अपना राजनीतिक एजेंडा बनाना चाहिए। क्योंकि भारत का मतदाता अब धीरे-धीरे जागरूक होने लगा है उसे अपने वोट की कीमत का एहसास होने लगा है अब वह जानने लगा है कि वह अपने वोट से देश की तस्वीर और तकदीर को बदल सकता है। भविष्य में भारत में टू पार्टी सिस्टम का विकास हो सकता है जो भारतीय राजनीति को एक नई दिशा देगा।

जय हिंद

अभय सिंह

कोरोना से लड़ना तो काहे 'को' रोना

विश्व युद्ध में विश्व के दो हिस्से हो जाते हैं जो आपस में लड़ते हैं। लेकिन आज के कोरोना युद्ध में पूरा विश्व एक होकर इसका सामना कर रहा है। हमारा शरीर बढ़ा है जो दिखाई देता है जबकि कोरोना सूक्ष्म है और सूक्ष्म ही अधिक शक्तिशाली होता है। मनुष्य की आकृति तो सील है लेकिन उसका अंतस्थल या केंद्र बिंदु अत्यंत सूक्ष्म है जो उसे सर्वाधिक शक्ति संपन्न बना देता है। आयुर्वेद में 25 प्रकार के ज्वरों (बुखारों) का उल्लेख किया गया है जिनकी संख्या अवान्तर भेद से बहुत अधिक हो जाती है। सभी ज्वर विभिन्न क्रमियों या वायरसों के कारण मनुष्य देह में तरह-तरह के विकार उत्पन्न कर देते हैं। मनुष्य की रोग-प्रतिरोधक शक्ति उन सब का मुकाबला करती है जिसकी सहायता के लिए औषधि भी दी जाती है। इस समय हमारा लक्ष्य को रोना से लड़ना है जिसमें पूरे विश्व को झकझोर कर रख दिया है, जो बिना शस्त्र के शक्तिशाली मनुष्यों का संहार कर रहा है और उन्हें घरों में छिपने के लिए बाध्य कर रहा है।

कोरोना वायरस बाहरी वस्तुओं पर जब चिपका रहता है तो लगभग 9 घंटे बाद वह स्वतः मर जाता है लेकिन जब किसी शरीर में प्रवेश कर जाता है तो वह तेजी के साथ गुणात्मक रूप से बढ़ता रहता है और आसानी से समाप्त नहीं होता। इस लेख का उद्देश्य कुछ ऐसी आयुर्वेदिक औषधियों से परिचित कराना है जो कोरोना जैसी बीमारी से लड़ने में सहायक सिद्ध होंगी। नीम घनवटी, गिलोय घनवटी और सुदर्शन चूर्ण घन वटी- इन तीनों का उपयोग उसमें लिखी विधि के अनुसार ज्वर की स्थिति में लाभप्रद सिद्ध होगा। यदि कोरोना संक्रमण पॉजिटिव आया हो तो इन दवाओं का प्रयोग तुरंत चालू कर देना चाहिए। आयुर्वेद शास्त्र 'शाईगंधर संहिता' में स्पष्ट किया गया है कि सुदर्शन चूर्ण समस्त प्रकार के ज्वरों का वैसे ही नाश कर देता है जैसे भगवान् श्री कृष्ण का सुदर्शन चक्र राक्षसों का संहार कर देता है। जब तक समाज में कोरोना व्याप्त है तब तक व्यक्ति त्रिकुटा (व्योष) चूर्ण का प्रयोग सुबह-शाम कर सकते हैं। साँद, मिर्च (काली) और पिप्ली का

चूर्ण ही 'त्रिकुटा' कहलाता है। त्रिकुटा चूर्ण को नियमित रूप से सुबह-शाम लिया जाए तो शरीर में आसानी से ज्वर का प्रवेश नहीं हो पाएगा। यह अग्नि को दीप्त करता है, कफ और मैद (मोटापा) को नष्ट करता है तथा कुछ (कोढ़), पीनस (सर्दी- जुखाम), अरुचि, आमदोष, मेह (प्रेमह), शोथ (सूजन), नेत्र-रोग और गले के रोगों का नाश करता है। त्रिकुटा के साथ त्रिफला (हरड़, बहेड़ा, आँवला) चूर्ण बराबर की मात्रा में सेवन करने से अनेक व्याधियों का नाश होता है। त्रिफला को 'रसायन' कहा जाता है। पुरानी कहावत है - 'साँद मिर्च पीपर, इन्हें खाए के जी पर।' औषधि के अभाव में देहात के लोग रोज सुबह निराहार (खाली पेट) नीम की पाँच पत्तियाँ चबाकर पानी के साथ लेते रहें। आयुर्वेद में कहा गया है कि नीम की पिसी हुई पत्तियों के लेप से घाव भर जाता है और उसे खाने से कुष्ठ, पित्त-कफ तथा क्रमि रोग नष्ट होते हैं। महात्मा गांधी तो नित्य प्रति के भोजन में नीम के पत्तों की चटनी का सेवन करते थे और

बकरी का दूध पीते थे। उपरोक्त विवरण जनता-जनार्दन की सेवार्थ दिया जा रहा है। एक विशेष बात का ध्यान रखना चाहिए कि शरीर में रोग-प्रतिरोधक शक्ति बढ़ाने के लिए पीपल के लोहिये सुपाच्य भोजन करना चाहिए ताकि कोई रोग जल्दी आक्रमण ना कर सके। जो लोग योगाभ्यास में रुचि रखते हों वे औषधियों के अलावा अनुलोम-विलोम प्राणायाम, कपालभाति तथा भरिंत्रका प्राणायाम कर सकते हैं। भरिंत्रका इतना प्रबल प्राणायाम है जो शरीर में गर्मी उत्पन्न करके रोगों का नाश करता है और जठराग्नि की वृद्धि करता है। मीडिया के माध्यम से जो उपचार बताए गए हैं उनका प्रयोग भी अपनी-अपनी प्रकृति और आवश्यकता के अनुसार करते रहना चाहिए। स्वास्थ्य के संबंध में काका हाथरसी का एक दोहा प्रसिद्ध है अतः उसे भी याद रखें - भोजन आधा पेट कर, दुग्ना पानी पिउ। तिगुना श्रम चौगुनी हँसी, वर्ष सवा सौ जिउ।।

डॉ लक्ष्मीनारायण गर्ग 'आयुर्वेद रत्न'

जागृति

विनय—पद

प्रभु ! अब सही न जावे पीर ।
अर्धागिनि कौहू सँग छूट्यौ,
कौन धरावै धीर ॥
करत रहत हाँ में हाँ सबकी,
जौं लौं रट्टू कीर ॥
आधि दृ व्याधि नहिं पीछा छोड़ें,
सहै विषम विषदृतीर ॥
अपने हिय की कहि न सकि 'रजक',
पिए रक्त के नीर ॥

डॉ. राजेन्द्र कृष्ण अग्रवाल 'रजक'

धनतेरस :

धनतेरस पी सकत हैं,
सेब, सन्तरा, आम ।
अनार, केला, मौसमी,
अंगूरी बदनाम ॥
अंगूरी बदनाम,
नामका भी देती रस ।
धन नहिं जा के पास,
पी न सकता गन्ना रस ॥
कहें 'रजक' निर्धन पर
कोई खात ना तरस ।
धनवानन की नित्त
देखि लेऔ धनतेरस ॥

धनतेरस:

धनतेरस सब चख सकत,
जब जो भी मन भाय ।
खट, मिट्टा, नमकीन, कटु,
कड़वा और कषाय ॥
कड़वा और कषाय,
कि धन की महिमा भारी ।
खाऔ भर—भर पेट,
बिगाड़ौ भर—भर लारी ॥
जिनके नहिं धन पास,
रहे हैं बहुत वे तरस ।
जाके है धन पास
नित्त वाकी धनतेरस ॥

धनतेरस :

धनतेरस बरसत सबहिं,
हास्य, करुण, श्रृंगार ।
रौद्र, भयानक, वीर अरु
अद्भुत, दिखता सार ॥
अद्भुत दिखता सार,
दिखे बीभत्स नजारे ।
धन नहिं जा के पास,
शान्त रस रहे सहारे ॥
कहें 'रजक' कविराय,
भक्ति,वात्सल्यऔ' बतरस ।
बरसें वाके पास,
एक नहिं सब धनतेरस ॥

दिव्य अयोध्या भव्य अयोध्या



डिजिटल माध्यमों से संगीत के बदलते स्वरूप स्वरूप को स्वीकारना ही श्रेयस्कर

संगीत एक ऐसी ललित कला है जिससे मानव-जीवन का जन्म से लेकर मृत्यु तक अविच्छिन्न सम्बन्ध बना ही रहता है। फिर भारतीय संस्कृति में तो संगीत का सम्बन्ध प्राचीन काल से ही एक दिव्य और स्वर्गीय कला के रूप में भी स्थापित है। इसे ईश्वर प्राप्ति का भी सर्वाधिक सरल, सहज, सुगम और श्रेष्ठ साधन माना गया है। नादब्रह्म की आराधना हेतु योग अथवा संगीत ही सर्वश्रेष्ठ साधन हैं। योग में जहाँ अनहद नाद (अनाहत) की साधना की प्रधानता रहती है, वहीं संगीत में आहत नाद की साधना कर ईश्वर को प्रसन्न किया जाता है। योग-साधना में जहाँ साधक की नितान्त वैयक्तिकता रहती है, वहीं संगीत की आराधना व्यक्तिगत या व्यक्तिगत होते हुए भी स्वतः ही समष्टिगत बन जाती है।

सच पूछो तो व्यक्तिगत और समष्टिगत प्रभाव के इसी अन्तर के चलते संगीत कला, योग से भी कहीं अधिक उच्चासन पर विराजित हो जाती है। भगवान् स्वयं देवर्षि नारद के प्रश्न का उत्तर देते हुए कहते हैं कि—

‘नाहं वसामि वैकुण्ठे, योगिनां हृदये न च।
मद्भक्ता यत्र गायन्ति, तत्र तिष्ठामि नारद।।’

—पद्मपुराणधृतराखण्ड 14:25

यही नहीं, उनको तो सबसे छोटा होने के बाद भी संगीत का वेद ‘सामवेद’ ही सर्वाधिक प्रिय है। इसीलिए कह देते हैं कि—

‘वेदानां सामवेदोऽस्मि’—श्रीमद्भगवद्गीता 10:82

नाद या स्वर का कोई रूप दृष्टिगत नहीं होता। अतः संगीत एक अदृश्य कला जैसी है। जैसे परमेश्वर के होने का हमें आभास तो होता है, किन्तु साक्षात् दर्शन नहीं होता और अन्तस् में विराजित उस परमात्मा को देखने के लिए हमें दिव्य दृष्टि की आवश्यकता होती है यही ठीक उसी प्रकार संगीत जैसी दिव्य कला को सीखने के लिए भी गुरु की महती आवश्यकता होती है। प्राचीन काल में ही संगीत-शिक्षा प्राप्त करने के लिए गुरु की महती आवश्यकता का अनुभव कर लिया गया था और गुरु-शिष्य परम्परा की नींव पड़ गई थी। संगीत सीखने के लिए इसीलिए गुरुकुल-पद्धति ही सर्वश्रेष्ठ मानी जाती रही है। गुरु के साथ शिष्य का ही अविच्छिन्न और अहर्निश सान्निध्य ही शिष्य में वह सब गुण पैदा कर देता था, जिससे आगे चलकर शिष्य भी गुरुत्व को प्राप्त कर जाता था। कालान्तर में यही गुरुकुल पद्धति मुस्लिम शासन-काल में ‘घराना पद्धति’ जैसे ‘धिनोने’ रूप में परिवर्तित हो गई और सभी शिष्यों के प्रति समान भाव रखने वाली महनीय गुरु-शिष्य-परम्परा का क्षरण होना प्रारम्भ हो गया। ‘धिनोने’ शब्द का प्रयोग मैं केवल और केवल इसलिए कर रहा हूँ कि घराना पद्धति का सबसे बड़ा दोष यह था कि इसमें शिष्यगण के प्रति भी समानता का भाव न रखकर उन्हें भी तीन वर्गों में बाँट दिया गया—

खासुल खास, खास और आम।

खासुल खास गुरु के पुत्र अथवा पुत्री या दामाद ही हो सकते थे। खास में अन्य रिश्तेदार गिने जाते थे और शेष सभी आम शिष्यों की श्रेणी में। आम शिष्यों की श्रेणी वाले शिष्य (शागिर्द) कितने ही

गुरु-भक्त और अच्छे व सच्चे साधक क्यों न होते, उस शिक्षा से वंचित ही रह जाते थे, जो खासुलखास या खास शागिर्दों (शिष्यों) को दी जाती थी। संगीत की इस भेद-भरी तालीम (शिक्षण-व्यवस्था) ने गुरु-शिष्य-परम्परा की जड़ों को गहरे तक क्षति पहुँचाई। फिर भी तालीम सीना-ब-सीना ही दी जाती थी, यह तो मानना ही पड़ेगा। घराना-पद्धति का एक दोष यह भी था कि इसमें शिष्य को अपने उस्ताद (गुरु) और उसके घराने के अतिरिक्त किसी भी अन्य घराने के उस्ताद या उसके घराने के कलाकारों को सुनने तक की छूट नहीं थी। यही कारण रहा कि वे सब एक-दूसरे के घरानों की विशेषताओं से वंचित ही रह जाते थे।

यद्यपि आकाशवाणी (रेडियो) के उदय (प्रारम्भ) के साथ ही कलाकारों द्वारा एक-दूसरे को सुनने-सुनाने के कारण घरानों की प्रासंगिकता तो स्वतः ही समाप्त होने लग गई और शनैः शनैः हो भी गई, किन्तु आज भी बहुत-से कलाकार घरानों के इस दम्भ से बाहर नहीं निकल पा रहे हैं। मजे की बात यह भी है कि बहुधा कलाकार अपने अहं की तुष्टि के लिए यह अवश्य कहते दिखते हैं कि मैं अमुक घराने से हूँ, किन्तु प्रदर्शन के समय लगभग सभी कलाकार सब घालमेल करते हुए सभी घरानों की चीजों (बंदिशों आदि) को प्रदर्शित करके ही दम लेते हैं। दूसरी ओर, जब से पण्डित विष्णु नारायण भातखण्डे जी और पण्डित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी के योगदान के फलस्वरूप संगीत को स्कूल और कॉलेजों में विषय के रूप में पढ़ाया जाने लगा, तब से भी घरानों के बन्धन स्वतः ही टूट गए। यही कारण है कि देवस्थानों और राज-दरबारों तक सीमित रहा संगीत आज घर-घर तक जा पहुँचा है। अस्तु। भारतीय संगीत और पाश्चात्य संगीत में एक बड़ा अन्तर यह है कि हमारी प्रधान पाश्चात्य संगीत को जहाँ देखकर गाया-बजाया जाता है, वहीं भारतीय संगीत मेलोडी प्रधान होने के कारण स्वच्छन्द रूप से गाया-बजाया जाता है। प्रदर्शन के समय भारतीय कलाकार अपनी अलग ही दुनिया में खो जाता है। यही कारण है कि भारतीय संगीतज्ञ एक ही राग अथवा किसी बन्दिश की अगर हजार बार भी प्रस्तुति देगा तो हर बार एक अलग ही रंग बिखेर देगा, जबकि पाश्चात्य कलाकार एक ही चीज की हजार बार भी प्रस्तुति देगा, एक-सी ही देगा। भारतीय संगीत अपनी इसी विशेषता के कारण बिना गुरुमुखी विद्या के नहीं सीखा-सिखाया जा सकता। गुरु का प्रत्यक्ष सान्निध्य इसके लिए न केवल अनिवार्य है, बल्कि विवशता भीय क्योंकि भारतीय संगीत में कलाकार के अन्दर प्रत्युत्पन्नमति

पैदा करने की बहुत आवश्यकता पड़ती है। अब विचारणीय बात यह है कि कोविड-19 महामारी (कोरोना) के कारण जब समूचा विश्व-मानव अपने-अपने घरों में कैद होकर रह गया है, ऐसे में पहले से ही संगीत की शिक्षा ले रहे शिष्यगण अथवा नए प्रशिष्य आखिर कैसे प्रशिक्षित किए जाएँ? यह एक बहुत ही गम्भीर, चिन्तनीय, विचारणीय और यक्ष प्रश्न है।

यदि यह भी मान लिया जाए कि जो साल-छः माह से भी सीख रहे हैं, वे ऑनलाइन अपनी आगे की शिक्षा को जारी रख सकते हैं, क्योंकि उनमें इतनी समझ तो विकसित हो ही गई होगी किन्तु नए शिक्षार्थी कैसे प्रारम्भ कर पाएँगे? निश्चित ही यह नव-प्रशिष्यों के लिए तो बहुत ही चिन्तनीय है। खैर! यह तो हम सभी जानते भी हैं और मानते भी हैं कि—

‘आवश्यकता ही हर आविष्कार की जननी होती है।’ असम्भव को सम्भव बना देना मनुष्य के ही वश की बात है।

यह एक सुखद बात है कि हम सब इस समय इण्टरनेट के युग में जी रहे हैं। समूचा विश्व हर समय मोबाइल के रूप में हमारी मुट्ठी में रहता है। यदि यह सुविधा भी नहीं होती तो निश्चय ही भारतीय संगीत पर मंडराए ये काले बादल छँटना बहुत ही दुष्कर होता। अब भारतीय संगीत की शिक्षा ग्रहण करने के लिए जिज्ञासु को हाथ पर हाथ रखकर बैठने के बजाय ऑनलाइन शिक्षा का महत्त्व स्वीकारना ही होगा। उसे व्हाट्सएप, वीडियो कॉल और गूगल या जूम जैसे कुछ एप्स के माध्यम से ज्ञानार्जन हेतु अपने को तैयार करना होगा। इसी प्रकार संगीत हेतु वाद्य-यंत्रों के मैन्युअल स्वरूप के अतिरिक्त डिजिटल स्वरूप का सहारा भी लेना होगा। गायन व वादन अथवा नृत्य के अभ्यास के समय जब गुरु भी सम्मुख नहीं होगा, कोई अन्य संगतकार भी सम्मुख नहीं होगा तो ऐसी स्थिति में क्या करेगा कोई भी विद्यार्थी या कलाकार? निश्चित ही उसे डिजिटल तानपूरा, डिजिटल तबला, डिजिटल लहरा पेटी जैसे साधनों की सहायता लेनी ही होगी। एक बात और। हर शिक्षार्थी को अब इस गुरुमुखी विद्या के लिखित स्वरूप को भी स्वीकारना ही होगा। बंदिशें आदि तैयार करने के लिए स्कूल और कॉलेज के छात्रों की भाँति स्वरलिपि और ताललिपि पद्धतियों (नोटेशन सिस्टम) के महत्त्व को भी स्वीकारना ही होगा। अब हमें इस नई व्यवस्था को ठीक उसी प्रकार आत्मसात् करना होगा जैसे कि दूरदर्शन के

आविष्कार से पहले हम रेडियो-ट्रांजिस्टर पर आकाशवाणी से प्रसारित दैनिक समाचार, विविध खेल व सांस्कृतिक समाचार या फिर विविध शुभाशुभ अवसरों पर प्रसारित समाचारों को प्रवाचक अथवा कमेंटेटर के माध्यम से बस सुना करते थे, देखते नहीं थे। मैं अपनी बात को अधिक स्पष्ट करने के लिए एक बात और कहना चाहूँगा कि यदि हमारा दृष्टिकोण सकारात्मक होगा तो हम किसी भी कठिनाई से सहज ही उबर सकते हैं और अगर नकारात्मक होगा तो लाख साधनों के बावजूद भी हम असन्तुष्ट ही रहेंगे। मैं लम्बे समय से शारीरिक व मानसिक दिव्यांगों को संगीत-चिकित्सा के साथ-साथ संगीत-प्रशिक्षण भी देता आ रहा हूँ। मैंने अपने 50 वर्षों के संगीत-शिक्षण काल में यह अनुभव किया है कि दृष्टिहीन व्यक्ति चूँकि बाहरी दुनिया से परे अपनी अलग ही दुनिया में रहते हैं, अतः प्रायः उन्हें संगीत सीखने में भी देरी नहीं लगती। इसी प्रकार जेलों में आजीवन कारावास भोग रहे लोगों में अनेकानेक बन्दी ऐसे मिल जायेंगे जो काव्य, लेखन, संगीत, चित्रकला या मूर्तिकला में बेहद पारंगत हैं। कारण, उनका ध्यान बस एक ओर ही केन्द्रित हो चुका है। मैंने अनेक बार यह अनुभव किया है कि ऐसे बन्दी किसी भी मोटिवेशनल स्पीच को भी एक साधारण व्यक्ति से अधिक महत्त्व देते हुए न केवल सुनते हैं, बल्कि तदनुसार अमल भी करने के प्रयास करते हैं। मैंने अनुभव किया है कि जब-जब भी मैंने इनको सम्बोधित किया है, वो मुझे अपलक न केवल निहारते रहते हैं बल्कि भावावेश में कभी-कभी बहुतां के अश्रु तक छलक पड़ते हैं।

कहने का आशय यही है कि जब दुःख की भी सीमाएँ टूटने लगती हैं तब हर बुद्धिमान व्यक्ति खुद-ब-खुद कोई-न-कोई नया मार्ग निकाल ही लेता है। जो अकर्मण्य होकर केवल बैठा रहता है, उसकी भगवान् भी मदद नहीं करते। अतः जो विकराल समस्या आज हमारे सामने मुँह बाएँ खड़ी है, कल वह भी नहीं रहेगी किन्तु हमें केवल उस दिन की प्रतीक्षा ही नहीं करनी, तब तक किकर्तव्यविभूट से बैठे न रहकर अनवरत कर्मरत रहना है, चलते ही रहना है, बिना रुके, बिना थमे। रात्रि के बाद दिन का सूर्य भी अवश्य उदित होगा, अतः निराश होकर नहीं बैठना। बस, चलते ही रहना है, बढ़ते ही रहना है, क्योंकि ‘चलना ही जिन्दगी है।’ हमें तो बस कर्म में प्रवृत्त रहना है, फल तो स्वतः ही प्राप्त हो जाएगा।

डॉ. राजेन्द्र कृष्ण अग्रवाल ‘रजक’, मथुरा

अनुसंधान

(पृष्ठ-5 का शेष भाग)

संगीत एक ऐसी ललित कला है जिससे मानव-जीवन का जन्म से लेकर मृत्यु तक अविच्छिन्न सम्बन्ध बना ही रहता है। फिर भारतीय संस्कृति में तो संगीत का सम्बन्ध प्राचीन काल से ही एक दिव्य और स्वर्गीय कला के रूप में भी स्वीकृत है। इसे ईश्वर प्राप्ति का भी सर्वाधिक सरल, सहज, सुगम और श्रेष्ठ साधन माना गया है। नादब्रह्म की आराधना हेतु योग अथवा संगीत ही सर्वश्रेष्ठ साधन हैं। योग में जहाँ अनहद नाद (अनाहत) की साधना की प्रधानता रहती है, वहीं संगीत में आहत नाद की साधना कर ईश्वर को प्रसन्न किया जाता है। योग-साधना में जहाँ साधक की निरान्त वैयक्तिकता रहती है, वहीं संगीत की आराधना व्यक्तिगत या व्यक्तिगत होते हुए भी स्वतः ही समष्टिगत बन जाती है। सच पूछो तो व्यक्तिगत और समष्टिगत प्रभाव के इसी अन्तर के चलते संगीत कला, योग से भी कहीं अधिक उच्चस्तर पर विराजित हो जाती है। भगवान् स्वयं देवर्षि नारद के प्रश्न का उत्तर देते हुए कहते हैं कि—

‘नाहं वसामि वैकुण्ठे, योगिनां हृदये न च।
मदभक्ता यत्र गायन्ति, तत्र तिष्ठामि नारद।।’
—पद्मपुराणधृतराज्यखण्ड 14:25

यही नहीं, उनको तो सबसे छोटा होने के बाद भी संगीत का वेद ‘सामवेद’ ही सर्वाधिक प्रिय है। इसीलिए कह देते हैं कि—

‘वेदानां सामवेदोऽस्मि’—श्रीमद्भगवद्गीता 10:22

नाद या स्वर का कोई रूप दृष्टिगत नहीं होता। अतः संगीत एक अदृश्य कला जैसी है। जैसे अतेश्वर के होने का हमें आभास तो होता है, किन्तु साक्षात् दर्शन नहीं होता और अन्तस् में विराजित उस परमात्मा को देखने के लिए हमें दिव्य दृष्टि की आवश्यकता होती है। यही ठीक उसी प्रकार संगीत जैसी दिव्य कला को सीखने के लिए भी गुरु की महती आवश्यकता होती है। प्राचीन काल में ही संगीत-शिक्षा प्राप्त करने के लिए गुरु की महती आवश्यकता का अनुभव कर लिया गया था और गुरु-शिष्य परम्परा की नींव पड़ गई थी। संगीत सीखने के लिए इसीलिए गुरुकुल-पद्धति ही सर्वश्रेष्ठ मानी जाती रही है। गुरु के साथ शिष्य का यह अविच्छिन्न और अहर्निश सान्निध्य ही शिष्य में वह सब गुण पैदा कर देता था, जिससे आगे चलकर शिष्य भी गुरुत्व को प्राप्त कर जाता था। कालान्तर में यही गुरुकुल पद्धति मुस्लिम शासन-काल में ‘घराना पद्धति’ जैसे ‘घिर्नाने’ रूप में परिवर्तित हो गई और सभी शिष्यों के प्रति समान भाव रखने वाली महनीय गुरु-शिष्य-परम्परा का क्षरण होना प्रारम्भ हो गया। ‘घिर्नाने’ शब्द का प्रयोग मैं केवल और केवल इसलिए कर रहा हूँ कि घराना पद्धति का सबसे बड़ा दोष यह था कि इसमें शिष्यगण के प्रति भी समानता का भाव न रखकर उन्हें भी तीन वर्गों में बाँट दिया गया—

खासुल खास, खास और आम।
खासुल खास गुरु के पुत्र अथवा पुत्री या दामाद ही हो सकते थे। खास में अन्य रिश्तेदार गिने जाते थे और शेष सभी आम शिष्यों की श्रेणी में। आम शिष्यों की श्रेणी वाले शिष्य (शागिर्द) कितने ही

गुरु-भक्त और अच्छे व सच्चे साधक क्यों न होते, उस शिक्षा से वंचित ही रह जाते थे, जो खासुलखास या खास शागिर्दों (शिष्यों) को दी जाती थी। संगीत की इस भेद-भरी तालीम (शिक्षण-व्यवस्था) ने गुरु-शिष्य-परम्परा की जड़ों को गहरे तक क्षति पहुँचाई। फिर भी तालीम सीना-ब-सीना ही दी जाती थी, यह तो मानना ही पड़ेगा। घराना-पद्धति का एक दोष यह भी था कि इसमें शिष्य को अपने उस्ताद (गुरु) और उसके घराने के अतिरिक्त किसी भी अन्य घराने के उस्ताद या उसके घराने के कलाकारों को सुनने तक की छूट नहीं थी। यही कारण रहा कि वे सब एक-दूसरे के घरानों की विशेषताओं से वंचित ही रह जाते थे। यद्यपि आकाशवाणी (रेडियो) के उदय (प्रारम्भ) के साथ ही कलाकारों द्वारा एक-दूसरे को सुनने-सुनाने के कारण घरानों की प्रासंगिकता तो स्वतः ही समाप्त होने लग गई और शनैः शनैः हो भी गई, किन्तु आज भी बहुत-से कलाकार घरानों के इस दम्भ से बाहर नहीं निकल पा रहे हैं। मजे की बात यह भी है कि बहुधा कलाकार अपने अहं की तुष्टि के लिए यह अवश्य कहते दिखते हैं कि मैं अमुक घराने से हूँ, किन्तु प्रदर्शन के समय लगभग सभी कलाकार सब घालमेल करते हुए सभी घरानों की चीजों (बंदिशों आदि) को प्रदर्शित करके ही दम लेते हैं। दूसरी ओर, जब से पण्डित विष्णु नारायण भातखण्डे जी और पण्डित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी के योगदान के फलस्वरूप संगीत को स्कूल और कॉलेजों में विषय के रूप में पढ़ाया जाने लगा, तब से भी घरानों के बन्धन स्वतः ही टूट गए। यही कारण है कि देवस्थानों और राज-दरबारों तक सीमित रहा संगीत आज घर-घर तक जा पहुँचा है। अस्तु। भारतीय संगीत और पाश्चात्य संगीत में एक बड़ा अन्तर यह है कि हार्मोनी प्रधान पाश्चात्य संगीत को जहाँ देखकर गाया-बजाया जाता है, वहीं भारतीय संगीत मेलोडी प्रधान होने के कारण स्वच्छन्द रूप से गाया-बजाया जाता है। प्रदर्शन के समय भारतीय कलाकार अपनी अलग ही दुनिया में खो जाता है। यही कारण है कि भारतीय संगीतज्ञ एक ही राग अथवा किसी बन्दिश को अगर हजार बार भी प्रस्तुति देगा तो हर बार एक अलग ही रंग बिखेर देगा, जबकि पाश्चात्य कलाकार एक ही चीज की हजार बार भी प्रस्तुति देगा, एक-सी ही देगा। भारतीय संगीत अपनी इसी विशेषता के कारण बिना गुरुमुखी विद्या के नहीं सीखा-सिखाया जा सकता। गुरु का प्रत्यक्ष सान्निध्य इसके लिए न केवल अनिवार्य है, बल्कि विवशता भीय क्योंकि भारतीय संगीत में कलाकार के अन्दर प्रत्युत्पन्नमति

पैदा करने की बहुत आवश्यकता पड़ती है। अब विचारणीय बात यह है कि कोविड-19 महामारी (कोरोना) के कारण जब समूचा विश्व-मानव अपने-अपने घरों में कैद होकर रह गया है, ऐसे में पहले से ही संगीत की शिक्षा ले रहे शिष्यगण अथवा नए प्रशिक्षु आखिर कैसे प्रशिक्षित किए जाएँ? यह एक बहुत ही गम्भीर, चिन्तनीय, विचारणीय और यक्ष प्रश्न है। यदि यह भी मान लिया जाए कि जो साल-छः माह से भी सीख रहे हैं, वे ऑनलाइन अपनी आगे की शिक्षा को जारी रख सकते हैं, क्योंकि उनमें इतनी समझ तो विकसित हो ही गई होगी किन्तु नए शिक्षार्थी कैसे प्रारम्भ कर पाएँगे? निश्चित ही यह नव-प्रशिक्षुओं के लिए तो बहुत ही चिन्तनीय है। खैर! यह तो हम सभी जानते भी हैं और मानते भी हैं कि—

‘आवश्यकता ही हर आविष्कार की जननी होती है।’ असम्भव को सम्भव बना देना मनुष्य के ही वश की बात है। यह एक सुखद बात है कि हम सब इस समय इण्टरनेट के युग में जी रहे हैं। समूचा विश्व हर समय मोबाइल के रूप में हमारी मुट्ठी में रहता है। यदि यह सुविधा भी नहीं होती तो निश्चय ही भारतीय संगीत पर मंडराएँ ये काले बादल छँटना बहुत ही दुष्कर होता। अब भारतीय संगीत की शिक्षा ग्रहण करने के लिए जिज्ञासु को हाथ पर हाथ रखकर बैठने के बजाय ऑनलाइन शिक्षा का महत्त्व स्वीकारना ही होगा। उसे व्हाट्सएप, वीडियो कॉल और गूगल या जूम जैसे कुछ एप्स के माध्यम से ज्ञानार्जन हेतु अपने को तैयार करना होगा। इसी प्रकार संगीत हेतु वाद्य-यंत्रों के मैनुअल स्वरूप के अतिरिक्त डिजिटल स्वरूप का सहारा भी लेना होगा। गायन व वादन अथवा नृत्य के अभ्यास के समय जब गुरु भी सम्मुख नहीं होगा, कोई अन्य संगतकार भी सम्मुख नहीं होगा तो ऐसी स्थिति में क्या करेगा कोई भी विद्यार्थी या कलाकार? निश्चित ही उसे डिजिटल तानपूरा, डिजिटल तबला, डिजिटल लहरा पेटी जैसे साधनों की सहायता लेनी ही होगी। एक बात और। हर शिक्षार्थी को अब इस गुरुमुखी विद्या के लिखित स्वरूप को भी स्वीकारना ही होगा। बंदिशें आदि तैयार करने के लिए स्कूल और कॉलेज के छात्रों की भौतिक स्वल्पलिपि और ताललिपि पद्धतियों (नोटेशन सिस्टम) के महत्त्व को भी स्वीकारना ही होगा। अब हमें इस नई व्यवस्था को ठीक उसी प्रकार आत्मसात् करना होगा जैसे कि दूरदर्शन के

आविष्कार से पहले हम रेडियो-ट्रांजिस्टर पर आकाशवाणी से प्रसारित दैनिक समाचार, विविध खेल व सांस्कृतिक समाचार या फिर विविध शुभाशुभ अवसरों पर प्रसारित समाचारों को प्रवाचक अथवा कमेंटेटर के माध्यम से बस सुना करते थे, देखते नहीं थे। मैं अपनी बात को अधिक स्पष्ट करने के लिए एक बात और कहना चाहूँगा कि यदि हमारा दृष्टिकोण सकारात्मक होगा तो हम किसी भी कठिनाई से सहज ही उबर सकते हैं और अगर नकारात्मक होगा तो लाख साधनों के बावजूद भी हम असन्तुष्ट ही रहेंगे। मैं लम्बे समय से शारीरिक व मानसिक दिव्यांगों को संगीत-चिकित्सा के साथ-साथ संगीत-प्रशिक्षण भी देता आ रहा हूँ। मैंने अपने 50 वर्षों के संगीत-शिक्षण काल में यह अनुभव किया है कि दृष्टिहीन व्यक्ति चूँकि बाहरी दुनिया से परे अपनी अलग ही दुनिया में रहते हैं, अतः प्रायः उन्हें संगीत सीखने में भी देरी नहीं लगती। इसी प्रकार जेलों में आजीवन कारावास भोग रहे लोगों में अनेकानेक बन्दी ऐसे मिल जायेंगे जो काव्य, लेखन, संगीत, चित्रकला या मूर्तिकला में बेहद पारंगत हैं। कारण, उनका ध्यान बस एक ओर ही केन्द्रित हो चुका है। मैंने अनेक बार यह अनुभव किया है कि ऐसे बन्दी किसी भी मोटिवेशनल स्पीच को भी एक साधारण व्यक्ति से अधिक महत्त्व देते हुए न केवल सुनते हैं, बल्कि तदनुसार अमल भी करने के प्रयास करते हैं। मैंने अनुभव किया है कि जब-जब भी मैंने इनको सम्बोधित किया है, वो मुझे अपलक न केवल निहारते रहते हैं बल्कि भावावेश में कभी-कभी बहुतों के अश्रु तक छलक पड़ते हैं। कहने का आशय यही है कि जब दुःख को भी सीमाएँ टूटने लगती हैं तब हर बुद्धिमान व्यक्ति खुद-ब-खुद कोई-न-कोई नया मार्ग निकाल ही लेता है। जो अकर्मण्य होकर केवल बैठा रहता है, उसकी भगवान् भी मदद नहीं करते। अतः जो विकराल समस्या आज हमारे सामने मुँह बाएँ खड़ी है, कल वह भी नहीं रहेगी। बिना रुके, बिना थमे। रात्रि के बाद दिन का सूर्य भी अवश्य उदित होगा, अतः निराश होकर नहीं बैठना। बस, चलते ही रहना है, बढ़ते ही रहना है, क्योंकि ‘चलना ही जिन्दगी है।’ हमें तो बस कर्म में प्रवृत्त रहना है, फल तो स्वतः ही प्राप्त हो जाएगा।

WHY YOU NEED AN INVESTMENT OBJECTIVE

Specifying exact goals that investments must achieve is a crucial step in eventually meeting those goals

Understanding and deciding on investment objectives is a crucial stage which many people are unable to do. The importance of doing this well- and the pitfalls of doing it badly- are demonstrated by the following example, which an analyst came across while studying realworld investment portfolios.

The investors were a retired couple who, despite having a good understanding of investing, were unable to figure out whether they were on the right track for their goals. They had investments in a number of funds, mostly equity. They also had a number of needs for which these investments were made. One, they needed a monthly amount regularly to meet household expenses. Two, they needed emergency funds that could be withdrawn at short notice for unforeseen uses. Three, they had some large family-related expenses coming up in about three years. And four, there was the money they would need in the long run to fund their monthly living expenses far into the future as prices rose and needs changed.

Even though this couple had chosen their funds well, they were having problems understanding whether they were on the right track. What they needed was nothing out of the ordinary. In fact, many others have more complex needs. Even so, it was difficult for them to be confident that their investment portfolio was indeed the right one for the job.

But that wasn't their fault. Understanding how an investment portfolio maps onto a set of different needs is practically impossible. Some of the needs are contradictory. For example, the short-term income needs require stability while for the long-term nest egg, high returns are more important. Looking at a list of ten or more funds; with SIPs, dividends and withdrawals of varying amounts flowing in and out; with different performance and quality levels; and different expectations of risk and returns, it is impossible

to figure out, even roughly, whether the portfolio will do the job.

So what's the solution? Some sophisticated analytical tool that will give us an insight? No, actually, it's something that someone in your family probably already practices, or at least used to in the decades gone by. The solution is bags- separate bags for each need.

Do you have a grandma in your family who used to save money by keeping it in little bags, each for a different purpose? Lots of us do, or at least did in earlier days. Many of us know of women in the older generation who would run her family's entire life's finances on this basis. They typically have little pouches with a drawstring around its neck, like a pyjama. When the husband brings home his monthly salary, they put some money in the vegetables pouch, some in the milk pouch, some in the household servant's pouch and the dhobi pouch and so on. There were also a few bigger pouches that were meant for savings, as for a daughter's wedding. This pouch would be converted into some gold trinket or the other every few months.

While financially sophisticated readers will call this system primitive and sub-optimal, it has a lot going for it. It was a simple system, easy to implement and easy to understand and above all, it worked. Most importantly, it incorporated one of the golden rules of personal investment management- separate portfolios for separate goals. The old lady would not have been such an organised household manager if she had kept all the money into one big bag, and nor should you.

SUMMARY

For most investors, a particular combination of fixed-income and equity investments is suitable. This is asset allocation. Shifting money between the two as one or the other gains more, is called asset rebalancing. Asset rebalancing reduces risk and helps you cope with volatility.

Source: - www.franklintempletonindia.com

दीपावली विशेष आओ फिर से दिया जलाएँ

भरी दुपहरी में अंधियारा
सूरज परछाई से हारा
अंतरतम का नेह निचोड़ें—
बुझी हुई बाती सुलगाएँ।
आओ फिर से दिया जलाएँ
हम पड़ाव को समझे मंजिल
लक्ष्य हुआ आंखों से ओझल
वर्तमान के मोहजाल में—
आने वाला कल न भुलाएँ।
आओ फिर से दिया जलाएँ।
आहुति बाकी यज्ञ अधूरा
अपनों के विघ्नों ने घेरा
अंतिम जय का वज्र बनाने—
नव दधीचि हड्डियां गलाएँ।
आओ फिर से दिया जलाएँ
—अटल बिहारी वाजपेयी

दिवाली मना लेना। इस बेदर्द दुनिया में शायद ही कोई तुम्हारा
खयाल रखे। 'रजक'की ओर से तुम सभी को दिवाली की
बहुत-बहुत शुभ कामनाएँ !
HAPPY DIWALI



धर्म और मजहब

धर्म नहीं मजहब हैं सब,
धर्म सनातन एक।
मानें जिसको सिर्फ अरु,
सिर्फ हिंदु—जन नेक ॥
सिर्फ हिंदु—जन नेक,
धर्म—हित कर्म जो करते।
अपनी ही नहीं विश्व—
शान्ति की बातें करते ॥
'रजक' मजे लेने के
ह ब हैं बा की म ज ह ब।
धरती को कब्जा ने की
ही सोच रखें सब ॥
डॉ. राजेन्द्र कृष्ण अग्रवाल 'रजक'

अयोध्या में विवादित ढाँचे के विध्वंस पर सीबीआई
कोर्ट द्वारा दिए गए निर्णय पर खलों की प्रतिक्रिया
एक कुंडलिया छन्द के माध्यम से

बरस अट्टाइस बाद जब,
मिला आज जो न्याय।
बरी निरपराधी हुए,
खल मुँह रहे फुलाय ॥
खल मुँह रहे फुलाय,
लेफ्ट सब लेफ्ट हो गए।
तज मरयादा कोर्ट,
नाग सब जहर उगल गए ॥
कहें 'रजक' कविराय,
बुद्धि पर खाय जिन तरस।
लगै सुधरने नाँय,
जि ससुरे अबउ सौ बरस ॥

डॉ. राजेन्द्र कृष्ण अग्रवाल 'रजक'

समृद्ध भारत वसुंधरा

दिवाली पर कविता

छोड़-छाड़ कर द्वेष-भाव को,
मीत प्रीत की रीत निभाओ,
दिवाली के शुभ अवसर पर,
मन से मन का दीप जलाओ ॥

क्या है तेरा क्या है मेरा,
जीवन चार दिन का फेरा,
दूर कर सको तो कर डालो,
मन का गहन अँधेरा,
निंदा नफरत बुरी आदतों,
से छुटकारा पाओ ।
दिवाली के शुभ अवसर पर,
मन से मन का दीप जलाओ ॥

खूब मिठाई खाओ छक कर,
लड्डू, बर्फी, चमचम, गुझिया

पर पर्यावरण का रखना ध्यान,
बम कहीं न फोड़ें कान
वायु प्रदूषण, धुएं से बचना,
रौशनी से घर द्वार को भरना
दिवाली के शुभअवसर पर,
मन से मन का दीप जलाओ ॥

चंदा सूरज से दो दीपक,
तन मन से उजियारा कर दें
हर उपवन से फूल तुम्हारे
जब तक जियो शान से,
हर सुख, हर खुशहाली पाओ,
दिवाली के शुभ अवसर पर,
मन से मन का दीप जलाओ ॥



जलाओ दिए पर रहे ध्यान इतना
अँधेरा धरा पर कहीं रह न जाए ।

नई ज्योति के धर नए पंख झिलमिल,
उड़े मर्त्य मिट्टी गगन स्वर्ग छू ले,
लगे रोशनी की झड़ी झूम ऐसी,
निशा की गली में तिमिर राह भूले,
खुले मुक्ति का वह किरण द्वार जगमग,
ऊषा जा न पाए, निशा आ ना पाए
जलाओ दिए पर रहे ध्यान इतना
अँधेरा धरा पर कहीं रह न जाए ।
सृजन है अधूरा अगर विश्व भर में,
कहीं भी किसी द्वार पर है उदासी,
मनुजता नहीं पूर्ण तब तक बनेगी,
कि जब तक लहू के लिए भूमि प्यासी,
चलेगा सदा नाश का खेल यूँ ही,
भले ही दिवाली यहाँ रोज आए
जलाओ दिए पर रहे ध्यान इतना
अँधेरा धरा पर कहीं रह न जाए ।
मगर दीप की दीप्ति से सिर्फ जग में,
नहीं मिट सका है धरा का अँधेरा,
उतर क्यों न आयें नखत सब नयन के,
नहीं कर सकेंगे हृदय में उजेरा,
कटेंगे तभी यह अँधेरे घिरे अब,
स्वयं धर मनुज दीप का रूप आए
जलाओ दिए पर रहे ध्यान इतना
अँधेरा धरा पर कहीं रह न जाए ।

गोपालदास 'नीरज' जी